स्वामी प्राणनाथ रचित कुलजम स्वरूप के सिन्धी ग्रन्थ में आध्यात्मिक दृष्टि

भगवान अटलानी, पूर्व अध्यक्ष, राजस्थान सिन्धी अकादमी, जयपुर

माना जाता है कि वेदों की रचना सिन्धु नदी के तटों पर हुई थी। सम्भवतः यही कारण है कि विश्व के सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद में सिन्धु नदी का तीस बार विस्तृत वर्णन हुआ है जबकि गंगा का उल्लेख मात्र दो सूत्रों में सन्दर्भ के रूप में किया गया है। इसलिये सिन्ध की परम्परा में सन्तों, महात्माओं, भक्त कवियों, आध्यात्मिक मार्गदर्शकों, सूफियों, पीरों और फकीरों की सदैव विशिष्ट उपस्थिति रही है। इनके प्रभाव का परिणाम १९४७ में हुए विभाजन के समय देखने को मिला। पंजाब व बंगाल का आधा हिस्सा गया, मगर सिन्ध सम्पूर्णतः पाकिस्तान की झोली में चला गया। इसके बावजूद पंजाब और बंगाल की तुलना में सिन्ध में कम खून-खराबा हुआ।

प्रणामी सम्प्रदाय के संस्थापक महामति प्राणनाथ रचित 'कुलजम स्वरूप' की १६९४ में तैयार की गई प्रथम हस्तलिखित प्रति पन्ना के मन्दिर में सुरक्षित है। कुलजम मिस्र की नील नदी का पर्यायवाची नाम है। इसका दूसरा अर्थ सागर या समुद्र है। कहा जा सकता है कि स्वामी प्राणनाथ की वाणी एक ऐसा सागर है जिसमें सभी धर्मों के ग्रन्थ सार, तत्त्व के रूप में समाविष्ट हैं। जिस प्रकार नदियां समुद्र में मिलती हैं, इसी तरह इस वाणी को समझने वाली प्रत्येक जीव की आत्मा ईश्वर में विलीन होकर मोक्ष प्राप्त करती है। स्वामी प्राणनाथ की वाणी को 'तारतम वाणी' या 'तारमय सागर' भी कहा जाता है। किसी शब्द के अन्त में 'तर' का प्रयोग तुलनात्मक स्तर का द्योतक होता है। इसी प्रकार शब्द के अन्त में 'तम' का प्रयोग श्रेष्ठता का परिचायक होता है। तार और तम का एक साथ प्रयोग करके लक्षणा में स्पष्ट किया गया है कि महामति प्राणनाथ की वाणी में जो आध्यात्मिक दृष्टि समाहित है उसे सभी धर्मों के ज्ञान का निचोड़ माना जा सकता है।

ग्रन्थ में शामिल कुल १८७८५ चौपाइयों को चौदह अध्यायों में विभाजित किया गया है। 'कुलजम स्वरूप' का बारहवां अध्याय 'सिंधी ग्रन्थ' या 'सिंधी वाणी' स्वामी प्राणनाथ के जीवन के सांध्यकाल में १६८८ में सृजित हुआ। 'सिंधी वाणी' का प्रणयन उनके आध्यात्मिक अनुभव, चिंतन व

मनन के ऐसे कालखण्ड में हुआ जिसे गहन गम्भीर की संज्ञा दी जा सकती है। 'सिंधी वाणी' में तेरह खण्डों में विभाजित मात्र ५२४ चौपाइयां सम्मिलित की गई हैं, जो सम्पूर्ण कुलजम स्वरूप की चौपाइयों की तुलना में तीन प्रतिशत से भी कम हैं।

'सिंधी वाणी' में उस अखण्ड सत्य की मीमांसा है जो नित्य और शाश्वत है। अक्षरातीत सत्ता को भूलकर सांसारिक जीव किन कष्टों और वेदनाओं के संजाल में उलझता है और निष्पत्ति के कौन से उपाय हैं, इस गुत्थी को स्वामी प्राणनाथ ने सिंधी वाणी में सुलझाने की चेष्टा की है। यह चित्रण व निर्देश किसी अन्य अध्याय में निरूपित नहीं किया गया है। इस दृष्टि से देखा जाये तो आकार में छोटी होने के बावजूद साधकों के लिए 'सिंधी वाणी' की विशिष्ट महत्ता है।

'सिंधी ग्रन्थ' की वाणी से पहले महामति प्राणनाथ की प्रतिष्ठा एक ऐसे आध्यात्मिक पथ प्रदर्शक के रूप में स्थापित हो चुकी थी जो हिन्दू, बौद्ध, ईसाई, मुस्लिम या किसी अन्य धर्म के स्थान पर मानव धर्म के प्रचारक व सन्देशवाहक बनकर जन-जन को जाग्रत करने का पुनीत कार्य कर रहे थे। 'कुलजम स्वरूप' के 'सिंधी ग्रन्थ' तक पहुंचते-पहुंचते सम्भवतः स्वामी प्राणनाथ का बोया आध्यात्मिक बीज वृक्ष के रूप में आकार लेकर फल देने की स्थिति में आ चुका था। परम पिता ईश्वर को पति व स्वयं को उसकी विरह में व्याकुल पत्नी के रूप में उच्चारित महामति प्राणनाथ की वाणी में सम्पूर्णतः समर्पण के साथ मिलन की गहन आकांक्षा विलोड़ित करती है। डॉ. मोतीलाल जोतवाणी ने 'ए डिक्शनरी ऑफ सिंधी लिटरेचर' में स्वामी प्राणनाथ की 'सिंधी वाणी' के सन्दर्भ में लिखा है, "He established sakhya (friendship), instead of dāsya (master-servant) relationship between God and himself."

मध्यकालीन भक्ति साहित्य में व्यक्तिगत मोक्ष को सर्वाधिक महत्व प्राप्त है। उसके विपरीत स्वामी प्राणनाथ एकांतिक मोक्ष स्वीकार करने से स्पष्ट इनकार करते हैं। वे अकेले 'अखण्ड सुख' प्राप्त न करके 'सुन्दर साथ' को भी उसका भागीदार बनाना चाहते हैं। अपने गुरु द्वारा निर्देशित बारह हजार आत्माओं को सखी के रूप में 'सुन्दर साथ' की संज्ञा देते हुए वे 'सिंधी वाणी' में कहते हैं,

''थी न सगां हेकली, बी तो लगाई।
छुटे न तोहिजी तोह रे, मूंजी फिरे न फिराई।।'' (खण्ड १, चौपाई ४५)

अर्थात् मैं अकेली नहीं चल सकती। मेरे ऊपर तुमने जो ब्रह्मात्माओं को जगाने का दायित्व डाला है उससे मैं किसी भी स्थिति में भाग नहीं सकती।

इसी प्रकार वे आगे कहते हैं,

''आऊं हेकली की थिआं, बी लगाई तो।

तो रे आए को कितई, जे हिन के पल्लेसी।'' (खण्ड १, चौपाई ४३)

अर्थात् हे मालिक, मैं अकेली कैसे चलूं? ये जो इतनी (बारह हज़ार) सखियां तुमने मेरे पीछे लगाई हैं, उनका आंचल तुम्हारे अलावा कौन पकड़ सकता है!

परमधाम जाने से पहले आत्माओं को जगाना ज़रूरी है। स्वामी प्राणनाथ के गुरु श्री देव चन्द्र ने चोला छोड़ते समय उन्हें अपने पास बुलाकर जो कुछ कहा था, उसे वाणी में इस प्रकार प्रस्तुत किया गया,

''तडे धणिएं मूके चयो, जे ब जण्यूं आंईन।

खिल्ले थियूं निहारे रांद अडां, तांजे सांगाईन।।'' (खण्ड ५, चौपाई १२)

अर्थात् तब मालिक (सद्गुरु श्री देव चन्द्र) ने मुझे कहा कि दो आत्मायें इस खेल में शामिल हुई हैं। वे देख-देखकर हंस रही हैं। कदाचित् वे तेरे जगाने से जाग जायें। (इन दोनों आत्माओं से आशय छत्रसाल व औरंगज़ेब की आत्माओं से था, जिन्हें श्री देव चन्द्र ने क्रमशः सुकुण्डल और सुकुमार नाम दिया।)

इन दोनों आत्माओं को जगाने के प्रयत्नों में मिली सफलता की जानकारी अपने गुरु श्री देव चन्द्र को देते हुए स्वामी प्राणनाथ कहते हैं,

''चअम हाल हिन जो, जा हिक मूं गडई।

मूं वेओ जमारो डोरींदे, हुन बी पण खबर सुंई।।'' (खण्ड ५, चौपाई २५)

अर्थात् पहली सखी (सुकुण्डल/छत्रसाल) मिल जाने का समाचार मैं सुना चुका हूँ। ढूंढते-ढूंढते मेरी सारी उम्र गुज़र गई है, किन्तु उस तक केवल आपका संदेश पहुँचा सका हूँ।

एक चौपाई में अपनी असफलता का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा,

''पण असल पांहिंजी गिरो में, जा रूह अल्ला चई।

सुकुमार बाई गडिबी, अज्जां सा पण न्हार सई।।'' (खण्ड ८, चौपाई ४०)

अर्थात अल्लाह (गुरु श्री देव चन्द्र) ने असली गिरोह के (बारह हज़ार) ब्रह्मश्रेष्ठियों में से जिस सुकुमार (औरंगजेब) के मिलने की बात बताई थी, वह अब तक नहीं पहुंची है।

औरंगजेब की आत्मा को जगाने में स्वामी प्राणनाथ भले ही सफल न हो पाये हों किन्तु उनके लिये सन्तोष का विषय है कि,

''डोरींदे जे लधिम, अरवा कै हजार।

किन जाण्यो घर नूर जो, के नूर घर पार।।'' (खण्ड ५, चौपाई २०)

अर्थात् इन दोनों को ढूंढते-ढूंढते मुझे कई हज़ार आत्मायें मिलीं। इनमें से कुछ ने अक्षरधाम को अपने निवास के रूप में पहचाना और कुछ ब्रह्मश्रेष्ठियों ने अक्षर के उस पार अक्षरातीत की, घर के रूप में पहचान की।

प्रायः अनुभव होता है कि धन, पद, सत्ता, बल, यौवन, सुन्दरता अथवा ज्ञान के अहंकार में डूबकर व्यक्ति का व्यवहार असामान्य हो जाता है। आध्यात्मिक उत्स पर पहुंचने वालों से अपेक्षा की जाती है कि वे इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करके काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, अहंकार आदि से मुक्त होंगे। व्यवहार में शेष इन्द्रियों का वर्चस्व उतना खुलकर सामने नहीं आता किन्तु अहंकार सिर चढ़कर बोलता है। अहंकार का जिन्न आक्रमण न कर बैठे, इस दृष्टि से महामति प्राणनाथ स्वयं कौनसी सावधानी रखते हैं? एक चौपाई में वे इसको स्पष्ट करते हैं,

''आऊं पांहिंजी पर में, कीं कीं पाणखे भायां।

वडी थीअन विच्च में, छेडो छडाइयां।।'' (खण्ड १, चौपाई ३७)

अर्थात् अपने मन में स्वयं को मैं बड़ा न समझ लूं, इसलिये जब भी बड़प्पन दिखाने या आगे खड़े होने का अवसर आता है, मैं पल्लू छुड़ा लेता हूं।

विश्व के लगभग सभी धर्म परलोक को सुखद बनाने के लिये इहलोक में तपस्या, पूजा-पाठ, ईश्वर भक्ति तथा शारीरिक-सांसारिक सुखों से विरक्ति का उपदेश देते हैं। मगर स्वामी प्राणनाथ इस सिद्धान्त के पक्षधर नहीं हैं। उनका मानना है कि इहलोक व परलोक दोनों में ब्रह्म मिलाप का सौभाग्य आकांक्षित है,

''आंऊं धणिआणी तोहिंजी, डे तूं मूं जीरे अंग।

मूं मुए पुठी जे डिए, हे केडी निस्बत संग।।'' (खण्ड ७, चौपाई ८५)

अर्थात् मैं तुम्हारी पत्नी हूं। जीते जी दर्शन देकर मुझसे मिलाप करो। अगर मरने के बाद पूछने आओगे तो फिर मेरा-तुम्हारा कैसा सम्बन्ध कहलायेगा। दूसरे शब्दों में आत्मा व परमात्मा का 'साथ' 'अखण्ड साथ' होना चाहिये। कोई शर्त 'अखण्ड साथ' में बाधक नहीं बननी चाहिये।

'कुलजम स्वरूप' और 'सिंधी ग्रन्थ' की चौपाइयों के माध्यम से महामति प्राणनाथ ने सभी धर्मों का सार तत्व प्रस्तुत किया। प्रणामी सम्प्रदाय के आश्रम और लोक हितकारी कार्य इसके जीवंत प्रमाण हैं। किन्तु 'सिंधी वाणी' ने सिंधी भक्ति साहित्य की काल क्रमानुसार टूटी हुई कड़ियों को भी जोड़ा है। काज़ी कादन (मृत्यु १५५१) के बाद सिंधी शायरी में शाह अब्दुल लतीफ़ (१६८९-१७५२) का नाम लिया जाता था। स्वामी प्राणनाथ (१६१८-१६९४) की 'सिंधी वाणी' ने इस अन्तराल को कम किया है।

'सिंधी वाणी' ने एक और महत्वपूर्ण तथ्य उजागर किया है। मध्य काल (१५२०-१८४३) की सिंधी काव्य धारा में भक्ति रचनाओं की प्रमुखता है। इन भक्ति रचनाओं में सूफ़ी काव्य की प्रधानता है। मध्यकाल के बाद ज्ञान मार्गी कवियों सामी व दलपत ने सिंधी में सृजन किया। आश्चर्य की बात है कि मध्यकालीन काव्य साहित्य में एक भी सिंधी कवि की राम व कृष्ण से सम्बन्धित वाणी उपलब्ध नहीं थी। जब तुलसीदास 'रामचरित मानस' और सूरदास 'सूरसागर' की रचना कर रहे थे, रहीम, रसखान व मीरा की पदावली राम व कृष्ण को समर्पित थी तब सिंधी काव्य में इन महापुरुषों की अनुपस्थिति अखरने व चकित करने वाली थी।

स्वामी प्राणनाथ की 'सिंधी वाणी' से प्रमाणित होता है कि मध्य काल में सिंधी में भी सगुण भक्ति काव्य की रचना हुई थी। उनकी चौपाइयों में समाहित दर्शन का मुख्य आधार श्रीमद्भागवत, भगवद्गीता व उपनिषद् हैं। श्रीकृष्ण उनके इष्टदेव हैं। रासलीला और कृष्ण चरित्र को आधार बनाकर स्वामी प्राणनाथ ने जीव, आत्मा तथा सृष्टि से उनके सम्बन्ध को स्पष्ट किया है। निश्चय ही, स्वामी प्राणनाथ ने अनेक धर्मों, विशेष रूप से मुस्लिम धर्म के धार्मिक ग्रन्थों का विशद व गहन अध्ययन करके उनके मूल सिद्धान्तों व समान तत्वों को अपनी वाणी के माध्यम से सामान्यजन तक पहुंचाया तथापि उनके सगुण भक्तिधारा के प्रवाह ने सिंधी काव्य में विचित्र लगने वाले शून्य की पूर्ति की।

जिन अस्त्रों के माध्यम से महात्मा गांधी ने स्वतन्त्रता की लड़ाई में विजय प्राप्त की उनमें साम्प्रदायिक सद्भाव का महत्वपूर्ण स्थान माना जाता है। सम्भवतः संस्कारगत स्तर पर धार्मिक भाईचारे का गुण उन्हें प्रणामी पंथ से मिला। महात्मा गांधी की माता पुतलीबाई के मायके वालों की आस्था संत परनामी (प्रणामी) पंथ से जुड़ी हुई थी। पोरबन्दर स्थित उनके मकान के निकट परनामी मन्दिर था। वह मन्दिर आज भी उसी स्थान पर स्थित है। विवाह के बाद उनकी माता पुतलीबाई नवयुगल को उस मन्दिर में आशीर्वाद दिलाने ले गईं थीं। महात्मा गांधी के सचिव श्री प्यारेलाल की पुस्तक 'Mahatma Gandhi, The Early Phase' के अनुसार गांधी जी ने स्वयं कहा था, ''हालांकि मुझे अब उस मन्दिर की बनावट आदि अच्छी तरह याद नहीं है मगर उसमें पत्थर के बुत या मूर्तियां नहीं थीं। मन्दिर की दीवारों पर कुछ उद्धरण लिखे हुए थे जो कुरान शरीफ की आयतों जैसे लगते थे (निश्चय ही ये 'कुलजम

स्वरूप' की चुनिन्दा चौपाइयां रही होंगी)। उस मन्दिर के महन्तों की वेशभूषा ठीक हिन्दू मन्दिरों के पुजारियों जैसी होती थी और उनकी प्रार्थना का तरीका मुसलमानों की बन्दगी से मिलता जुलता था।'' गांधी जी आगे कहते हैं, ''ये परनामी, प्राणनाथी के नाम से भी प्रसिद्ध हैं। सत्रहवीं सदी में महामति प्राणनाथ जिनका जन्म काठियावाड़ के ठाकुर परिवार में हुआ था, ने इस पंथ की स्थापना की। इस पंथ के मानने वालों को रहस्यवादी मुसलमानों की दृष्टि से देखा जाता था।''

उत्थान और पतन प्रकृति का नियम है। मनुष्य, परिवार, समाज, देश, संस्थाएं, धर्म, यहां तक कि सृष्टि और ब्रह्माण्ड पर भी यह नियम लागू होता है। सम्भवतः महामति प्राणनाथ की 'कुलजम स्वरूप' तथा 'सिंधी ग्रन्थ' में उपलब्ध वाणी का ही परिणाम है कि प्रणामी या परनामी या प्राणनाथी सम्प्रदाय सत्रहवीं शताब्दी से अब तक उत्तरोत्तर अधिक ऊर्जा के साथ प्रत्येक मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति हेतु उत्कृष्ट प्रतिबद्धतापूर्वक संलग्न है। मानवता के हित में कामना अनुचित नहीं होगी कि यह सम्प्रदाय प्रकृति के नियम का अपवाद सिद्ध हो!

सन्दर्भ सामग्री

१. कुलजम स्वरूप/प्रथम संस्करण १९६५, द्वितीय संस्करण १९७२ श्री प्राणनाथ प्रकाशन, दिल्ली : संपादक प्रो. माता बादल जायसवाल, इलाहाबाद

२. सिंधी वाणीः प्रथम संस्करण १९७३ः श्री प्राणनाथ प्रकाशन, दिल्लीः हिन्दी अनुवाद सहित संस्करण १९७६ः प्रकाशक पंडित मिश्रीलाल शास्त्री, पन्ना (म.प्र.)

३. महामति प्राणनाथ जी सिंधी वाणीः लेखक झम्मू छुगाणी, बैरागढ़, भोपालः प्रथम संस्करण जून १९९१ : सिंधी अरबी लिपिः राधिका पब्लिकेशन, बैरागढ़, भोपाल

४. महामति प्राणनाथ जी सिंधी वाणी (भाग २)ः लेखक झम्मू छुगाणी, बैरागढ़, भोपालः प्रथम संस्करण जुलाई १९९६ः सिंधी अरबी लिपिः राधिका पब्लिकेशन, बैरागढ़, भोपाल

५. महराणः हैदराबाद (सिंध, पाकिस्तान)ः जनवरी–मार्च १९९०ः सिंधी अरबी लिपिः झम्मू छुगाणी, बैरागढ़, भोपाल का आलेख 'सिंधी साहित जो हिकु लिकलु वर्कु (सतिरिहींअ संदीअ जे सन्त कवि महामति प्राणनाथ जूं ५२४ सिंधी चौपायूं)'

६. A Dictionary of Sindhi Literature : Dr. Moti Lal Jotwani

७. Mahatma Gandhi, The Early Phase : Pyare Lal